© 2018 IJSRSET | Volume 4, Issue 1, January-February-2018
Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099 | Page No : 1722-1731

विज्ञान और अध्यात्म का समन्वय

मंजू सरोज
शोध छात्रा
दर्शनशास्त्र विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

वैज्ञानिक आध्यात्मवाद को समझने के लिए हमें इस तथ्य पर ध्यान देना होगा कि हमारे समक्ष जो विश्व ब्रह्माण्ड है, वह मूलतः दो सत्ताओं से मिलकर बना है–एक जड़ व दूसरा चेतन। जड़ सत्ता अर्थात् पदार्थ का अध्ययन विज्ञान क विषय है जबकि चेतन सत्ता आत्मा–परमात्मांश का अध्ययन अध्यात्म का विषय है। अतः इस ब्रह्माण्ड को पूरे तौर से समझने के लिए हमें इन दोनों ही सत्ताओं को ध्यान में रखना होगा।

भारतवर्ष में अध्यात्म और विज्ञान का सदा से समन्वय रहा है। वेद एवं वैदिक वा🕐न विज्ञान और अध्यात्म को साथ–साथ लेकर चलते हैं, फिर चाहे आयुर्वेद हो अथवा वास्तु। पश्चिमी देशों में भी एक लम्बे अर्से तक विज्ञान एवं अध्यात्मक साथ–साथ रहे। प्रत्येक वैज्ञानिक ग्रन्थ में परमात्मा की चर्चा पाई जाती थी। सर आइजेक न्यूटन ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'प्रिन्सपिया' में परमात्मा की चर्चा करते हुए लिखा है कि परमात्मा ने इस ब्रह्माण्ड की रचना की और इसे संवेग प्रदान किया, जिसके कारण वह गतिशील है। उन्होंने यह भी लिखा कि ब्रह्माण्ड रूपी नाटक के मंच पर जब कोई विकृति पैदा होती है तो परमात्मा स्वयं उसे ठीक करता है। यह भाव कुछ इसी तरह का है जैसा की गीता में कहा गया है–

"यदा यदा हि धर्मसय ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।।
परित्रणाय साधुनां विनाशय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे।।"

© 2018 IJSRSET | Volume 4, Issue 1, January-February-2018
Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099 | Page No : 1722-1731

अध्यात्म और विज्ञान के बीच सम्बन्धों की उपेक्षा का पहला उदाहरण फ्रांस में मिलता है जब वहाँ के प्रख्यात गणितज्ञ पियरे साइमन डी लाप्लास जो की सम्राट नेपोलियन के एक वैज्ञानिक सलाहकार थे, ने एक ग्रंथ लिखा जिसका नाम था, 'सेलेशियल मिकैनिक्स्'। न्यूटन के नियमों का हवाला देते हुए इस ग्रन्थ में उन्होंने लिखा कि भविष्य की घटनाओं को हम उतनी ही परिशुद्धता से जान सकते हैं, जितनी परिशुद्धता से हम भूतकाल की घटनाओं को जानते हैं। उन्होंने लिखा कि यदि कोई व्यक्ति ब्रह्माण्ड के सभी कणों की स्थिति और वेग को जान सके, तो उसके लिये कुछ भी अनिश्चित नहीं रह जायेगा और उसकी आँखों के सामने भविष्य उसी तरह उपस्थित हो जायेगा जैसा कि भूतकाल। उन्होंने नेपोलियन को इस ग्रन्थ की एक प्रति भेट की, जिसे पढ़ने के बाद सम्राट ने लाप्लास से कहा कि आपने आकाशीय पिण्डों पर इतना विशाल ग्रन्थ लिखा है किन्तु इसमें एक बार भी परमात्मा की चर्चा नहीं की है। लाप्लास का उत्तर 'श्रीमन् मुझे इस परिकल्पना की कोई आवश्यकता महसूस नहीं हुई।'

'द यूनिवर्स एण्ड डॉ0 आइन्स्टाइन' के लेखक बर्नेट लिखते हैं– ''जिसे वैज्ञानिक तथा दार्शनिक आभास मय जगत कहते हैं, वह संसार है, जो कि मरणधर्मा मनुष्य अपनी प्रकृति के अनुरूप अनुभव करता है। जिसे ये वैज्ञानिक दार्शनिक यथार्थ जगत कहते हैं– वह रंग रहित, ध्वनि रहित, अव्याख्येय, 'कास्मास' है। मनुष्य के प्रक्षेपण के तल में यथार्थ जगत प्रतीकों का एक कंकाल–ढांचा मात्र है।''

'गाइड टू फिलासफी' नामक पुस्तक में श्री जोड ने भी ऐसा ही कुछ कहा है– ''मैटर दिक् तथा काल में विस्तृत एक रस्सी की ऐंठन की तरह है। वह एक इलेक्ट्रानी कुकुरमुत्ता है। अनन्त सम्भावनाओं की एक ऐसी तरंग है, जो कुछ नहीं जैसा है। ऐसी विद्युतधाराओं का समूह है, जो किसी भी 'वस्तु' में प्रवाहित नहीं होती। दिक्काल में घट रही घटनाओं की एक व्यवस्था है, जिसकी विशेषताएं मात्र गणितीय ढंग से संकेतित की जा सकती हैं।''

© 2018 IJSRSET | Volume 4, Issue 1, January-February-2018
Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099 | Page No : 1722-1731

एडिंगटन महाशय भी कहते हैं– ''मैटर'' का सारभूत अंश पिघलकर छायावत् बन गया है, बह गया है। वह एक अज्ञात परिमाण मात्र रह गया है, जिसके लिए गणितीय संकेत 'क्ष' का प्रयोग किया जा सकता है।

अध्यात्म की परिभाषा को देखे तो पाते हैं कि–

अध्यात्म का वास्तविक अर्थ है अपने भीतर के चेतन तत्व को जानना, मानना और दर्शन करना अर्थात अपने आप के बारे में जानना या आत्मप्रज्ञ होना। गीत के आठवें अध्याय में अपने स्वरूप अर्थात जीवात्मा को अध्यात्म कहा गया है। ''परमं स्वभावोऽध्यात्ममुच्यते''।

आत्मा परमात्मा का अंश है यह तो सर्वविदित है। जब इस सम्बन्ध में शंका या संशय, अविश्वास की स्थिति अधिक क्रियमान होती है तभी हमारी दूरी बढ़ती जाती है और हम विभिन्न रूपों से अपने को सफल बनाने का निरर्थक प्रयास करते रहते हैं जिसका परिणाम नकारात्मक ही होता है।

ये तो असंभव सा जान पड़ता है– मिट्टी के बर्तन मिट्टी से अलग पहचान बनाने की कोशिश करें तो कोई क्या कहे? यह विषय विचारणीय है।

अध्यात्मक की अनुभूति सभी प्राणियों में समान रूप से निरंतर होती रहती है। स्वयं की खोज तो सभी कर रहे हैं, परोक्ष व अपरोक्ष रूप से।

परमात्मा के असीम प्रेम की एक बूँद मानव में पायी जाती है जिसके कारण हम उनसे संयुक्त होते हैं किन्तु कुछ समय बाद इसका लोप हो जाता है और हम निराश हो जाते हैं, सांसारिक बन्धनों में आनन्द ढूंढ़ते ही रह जाते हैं परन्तु क्षणिक ही खुशी पाते हैं।

जब हम क्षणिक सम्बन्धों, क्षणिक वस्तुओं को अपना जान कर उससे आनन्द मानते हैं, जब की हर पल साथ रहने वाला शरीर भी हमें अपना ही गुलाम बना देता है। हमारी इन्द्रियाँ अपने आप से अलग कर देती हैं यह इतनी सूक्ष्मता से करती हैं– हमें महसूस भी नहीं होता कि हमने यह काम किया है?

© 2018 IJSRSET | Volume 4, Issue 1, January-February-2018
Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099 | Page No : 1722-1731

जब हमें सत्य की समझ आती है तो जीवन का अंतिम पड़ाव आ जाता है व पश्चाताप के सिवाय कुछ हाथ नहीं लग पाता। ऐसी स्थिति का हमें पहले ही ज्ञान हो जाए तो शायद हम अपने जीवन में पूर्ण आनन्द की अनुभूति के अधिकारी बन सकते हैं। हमारा इहलोक तथा परलोक भी सुधर सकता है।

अब प्रश्न उठता है की यह ज्ञान क्या हम अभी प्राप्त कर सकते हैं? हाँ! हम अभी जान सकते हैं की अंत समय में किसकी स्मृति होगी, हमारा भाव क्या होगा? हम फिर अपने भाव में अपेक्षित सुधार करए सकेंगे। गीता के आठवें अध्याय श्लोक संख्या आठ में भी बताया गया है–

यंयंवापि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम्।

तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भाव भावितः।।

अर्थात– ''हे कुंतीपुत्र अर्जुन! यह मनुष्य अन्तकाल में जिस–जिस भी भाव को स्मरण करता हुआ शरीर का त्याग करता है, उस–उस को ही प्राप्त होता है, क्योंकि वह सदा उसी भाव से भावित रहता है।''

अखण्ड ज्योति नामक पत्रिका में जनवरी 1947 में वैज्ञानिक अध्यात्म पर एक विशेषांक लेख प्रकाशित किया गया। जिसके प्रथम पृष्ठ की अंतिम पंक्ति में आचार्य श्रीराम शर्मा जी ने 'अखण्ड ज्योति के पाठ को! स्मरण रखो सबसे पहले जिसे पढ़ने और हृदयंगम करने की आवश्यकता है, वह है, वैज्ञानिक आध्यात्मवाद। यही ऋषियों का विज्ञान है।'

इसकी व्याख्या डॉ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी जी ने अपनी एक प्रसिद्ध घटना का स्मरण कराते हुये, मैं यहाँ विज्ञान और आध्यात्म की ओर आगे बढ़ने का प्रयास करूँगी। द्विवेदी जी शांति निकेतन में हिन्दी के प्राध्यापक के रूप में कार्यरत थे। उनसे अखण्ड ज्योति पत्रिका के एक परिजन ने भेंट की। अखण्ड ज्योति के उद्देश्यों, जीवन शैली की नवीनता तथा प्रस्तुतीकरण ने उन्हें बहुत प्रभावित किया। द्विवेदी जी ने पं0 श्रीराम शर्मा जी को शांति निकेतन में पधारने का आमंत्रण दिया। संयोगवश उसी दिन वहाँ शांति निकेतन में भारत के

© 2018 IJSRSET | Volume 4, Issue 1, January-February-2018
Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099 | Page No : 1722-1731

प्रख्यात वैज्ञानिक एवं नोबल पुरस्कार विजेता प्रो0 सी0वी0 रमन का व्याख्यान आयोजित किया गया था। द्विवेदी जी के साथ आचार्य श्रीराम शर्मा जी भी प्रो0 सी0वी0 रमन का व्याख्यान सुनने के लिए व्याख्यान कक्ष में पहुँचे। प्रो0 रमन ने अपने उद्‌बोधन में कहा, ''बीसवी सदी विज्ञान की सदी बन चुकी है। कोई देश इसके चमत्कारों के प्रभाव से अछूता नहीं है। जो आज है, वे कल नहीं रहेंगे, परन्तु विज्ञान का प्रयोग मानव हिम में हो, यह चुनौती न केवल समूचे विज्ञान के सामने है बल्कि समूची मानव के सामने है। वैज्ञानिकता, विज्ञान एवं वैज्ञानिकों को हृदयहीन व संवेदनशील हों, इसके लिए उन्हें आध्यात्मक का सहचर्य चाहिए'' प्रो0 रमन का प्रत्येक शब्द मर्मस्पर्शी था। जब आचार्य श्री ने0 प्रो0 रमन को उनके उत्तर व्याख्यान के लिए आभार व्यक्त किया तो प्रो0 रमन ने कहा, ''बात आभार की नहीं, बात क्रियान्वयन तो अध्यात्म क्षेत्र में भी होना है। अध्यात्म को भी विज्ञान का सहचर्य चाहिए। विज्ञान के प्रयोग से ही उसे मूढ़ताओं, भ्रांतियों एवं अंध परम्पराओं से मुक्त करेंगे। इस बात का वहाँ उपस्थित सभी ने समवेत समर्थन किया। तब प्रो0 रमन ने कहा ''बीसवीं सदी भले ही विज्ञान की सदी हो पर 21वीं सदी वैज्ञानिक आध्यात्मवाद की सदी होगी।''

पाश्चात्य दार्शनिक काण्ट की प्रसिद्ध उक्ति है– ''आस्था के लिए स्थान बनाने के लिए मुझे ज्ञान का निषेध करना पड़ा।'' (I had to deny knowledge in order to make room for Aaith) काण्ट के दर्शन के दो प्रमुख ध्येय थे, जैसा कि सर्वविदित है। एक, संदेहवाद के विरूद्ध विज्ञान की रक्षा करना तथा दूसरा, नैतिकता व धर्म की मान्यताओं को विज्ञान के आक्रमण से सुरक्षित रखना। इस तरह, काण्ट ने ज्ञान के क्षेत्र को जो बुद्धि पर आधारित है जो विज्ञान के अन्तर्गत आता है तथा दूसरा जो आध्यात्मिकता के अन्तर्गत आता है नैतिकता व धर्म जिसका आधार विश्वास व आस्था पर निर्भर है उससे अलग करते हैं।

अगर बात पाश्चात्य परम्परा की करें तो वहाँ पर नैतिकता व पारस्परिक धर्म को आध्यात्मिकता के अन्तर्गत रखा जाता है। परन्तु जो पाश्चात्य विचारक रहस्यवाद से प्रभावित थे, वो आध्यात्मिकता को भारतीय विचारकों की तरह अधिक व्यापक अर्थ में लेते थे तथा

© 2018 IJSRSET | Volume 4, Issue 1, January-February-2018
Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099 | Page No : 1722-1731

जिनकी विचारधारा संस्थागत रूढ़ धर्म की स्थापनाओं से स्वतंत्र थी; परन्तु आध्यात्मिकता की जो भी अवधारणा रही है उसे सामान्य मानवीय बुद्धि से परे माना जाता था।

काण्ट ने बुद्धि तथा उसके द्वारा प्राप्त ज्ञान को सीमाबद्ध किया, लेकिन उसके बाद के दार्शनिकों ने उस सीमा को मानने से इन्कार कर दिया। आधुनिकता की बात करें तो विज्ञान की अप्रत्यासित उन्नति एवं सफलता ने उसे एक ऐसा उच्च स्थान पर प्रतिष्ठित कर दिया कि उसके सन्दर्भ में किसी भी प्रकार की सीमा स्वीकार करना अमान्य लगने लगा। बुद्धि और आस्था के परस्पर विरोध में दोनों के लिए एक दूसरे से अलग क्षेत्र को निर्धारित कर दिया, जिससे इनके बीच में खाई प्रतीत होने लगी। यह मत प्रचलित हुआ कि विज्ञान बुद्धि का वास्तविक क्षेत्र है और उसके द्वारा सच्चे अर्थों में ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है तथा अन्य सभी मान्यताओं को कोरे विश्वास से अधिक कुछ नहीं और यदि ये विश्वास विज्ञान के सिद्धान्तों के प्रतिकूल पड़ते हैं तो ये सर्वथा अमान्य होंगे।

विज्ञान को उन्नति प्राप्त करने में आस्था का महत्वपूर्ण स्थान है। वही वास्तविक अध्यात्म बिना वास्तविक ज्ञान के नहीं प्राप्त हो सकता। जो बिना ज्ञान बिन बुद्धि के लोग आध्यात्मिक होने का दावा करते हैं वो अध्यात्मक नहीं कर्मकाण्ड व अंधविश्वास मात्र है।

आधुनिक समय में संज्ञान विज्ञान (Cognitive Science) के विकास के फलस्वरूप मानव–मस्तिष्क एवं मन के सम्बन्ध में कुछ नये भौतिकवादी सिद्धान्त (Computer theory of Mind) है। इसके अनुसार मन की बौद्धिक और अन्य रचनात्मक क्रियाओं की व्याख्या कम्प्यूटर के मॉडल पर की गयी है। इसके विस्तार में न जाते हुये यह बताना वांछनीय है कि इस मत की आलोचना कुछ संज्ञान वैज्ञानिकों व दार्शनिकों ने की है। इसमें एक प्रमुख नाम कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय के प्रो0 जॉन सर्ले का है जिन्होंने कम्प्यूटर सिद्धान्तों के स्थान पर 'जैविक प्रकृतिवाद' को प्रस्तावित किया है। उन्होंने कम्प्यूटर प्रोग्राम और मन की क्रियाओं में मूलभूत अंतर माना है। उनका कहना है कि कम्प्यूटर प्रोग्राम पूर्णतया आकारिक होते हैं। जबकि मन की क्रियाएँ अर्थ–बोध पर आधारित होती हैं। एक

© 2018 IJSRSET | Volume 4, Issue 1, January-February-2018
Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099 | Page No : 1722-1731

को दूसरे में केवल अपने से नहीं बदला जा सकता। फिर, कम्प्यूटर प्रोग्राम के सृजन के लिए अन्ततोगत्वा मन अनिवार्य है। इस अंतर के बावजूद प्रो0 सर्ले का सिद्धान्त भौतिकवाद के अन्तर्गत ही आता है। क्योंकि उन्होंने चेतना को मस्तिष्क की क्रिया से उत्पन्न माना है। उनके अनुसार, किसी व्यक्ति की चेतना की अन्य द्वारा प्रेक्षणीय नहीं है, बल्कि व्यक्ति का निजी अनुभव है। साथ ही, यह चेतना मस्तिष्क या शरीर की क्रियाओं से सत्तात्मक रूप से परिवर्त्य नहीं है। जैसा कि कम्प्यूटर सिद्धान्त में माना जाता है, फिर भी, यह कारणात्मक रूप से मस्तिष्क पर निर्भर करती है। अतः भौतिकवाद का हो एक रूप है। अब स्पष्ट है कि भौतिकवाद के लिए प्रस्तुत उपर्युक्त आलोचना कम्प्यूटर तथा जैविक प्रकृतिवाद दोनों सिद्धान्तों पर लागू होती है।

विज्ञान के सहारे भौतिकवाद की व्याख्या करने के पश्चात हम उन प्रत्यक्ष अनुभवों की बात करना चाहेंगे जो हमें अध्यात्मक की ओर ले जाते हैं। काण्ट की प्रसिद्ध पर्वत है कि दो चीजें उनके मन को बहुत ही प्रसंसा व आदर से भर देती है, ऊपर का तारामय आकाश और अन्दर का नैतिक नियम। मानव की नैतिक व सौन्दर्यपूर्ण अनुभूतियाँ उसे संसार के अन्य पदार्थों से बिल्कुल अलग कर देती है।

कॉपनिकस एवं डारर्विन के सिद्धान्तों ने पूरे संसार में मनुष्य को विशिष्ठ और ऊँचे स्थान से गिरने का प्रयास किया था, लेकिन अब हम मनुष्य की उस बौद्धिक क्षमता पर दृष्टिपात करते हैं जिसने इन सिद्धान्तों का सृष्टा होने के साथ विश्व को अनगिनत विभूतियाँ प्रदान की है तो मनुष्य को पुनः वह बेजोड़ स्थान प्राप्त हो जाता है। ऐसी दशा में वे सारे प्रयत्न धूमिल हो जाते हैं जो यह सिद्ध करने का प्रयास करते हैं कि मानव मात्र विद्युत रसायनिक मशीनी है। मनुष्य की बौद्धिकता, नैतिकता और सौन्दर्यबोध इसके विरूद्ध प्रबल प्रमाण हैं।

इन सभी गुणों के अतिरिक्त सामाजिकता और प्रेम भी ऐसी मानवीय विशेषताएँ या मूल्य हैं जो सच्चे अर्थ में मनुष्य को बनाती हैं आध्यात्मिकता उपर्युक्त मूल्यों को स्वीकार करती

© 2018 IJSRSET | Volume 4, Issue 1, January-February-2018
Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099 | Page No : 1722-1731

है। लेकिन इनके अलावा एक ऐसे मूल्य की बात करती हैं जो इनको अपने अन्दर आत्मसात करतु हुए इनमें परे जाती है और इस तरह आध्यात्मिकता मनुष्य को पूरी तरह से सार्थ और परिपूर्ण बनाने का दावा करती है। इसे हम दैवी मूल्य की संज्ञा प्रदान करते हैं। इस मान्यता के एक रूप के अनुसार मनुष्य एक दैवी स्वरूप है (बौद्धिक, नैतिकता इत्यादि) जिसके विषय में वह साधारणता अचेतन रहता है।

इस स्वरूप की अनुभूति ही उसके जीव की परिपूर्णता है जिससे समस्त दुखों व बुराइयों का नाश होकर शुभ एवं आनंद की सृष्टि होती है इसे मोक्ष या निर्वाण इत्यादि की संज्ञा दी गयी है। दैवी मूल्य की मान्यता के दूसरे रूप में बाह्य परम सत्ता को स्वीकार किया गया है जो समस्त संसार का रचयिता है और जीवन के समस्त मूल्यों का अधिष्ठाता है।

चूँकि सबका केन्द्र बिन्दु मानव है जिसको आधार बना कर स्वयं मानव ही विज्ञान और अध्यात्म की व्याख्या करता रहा है। हम यह नहीं कह सकते कि मानव जीवन की पूर्णता विज्ञान द्वारा प्रदत्य भौतिक वस्तुओं से ही हो जाती है। मानव मस्तिष्क से उपजे ये दोनों ही संस्कार अपने–अपने क्षेत्र में महारथ प्राप्त किये हुये हैं। जिनका ज्ञान विज्ञान से जुड़ कर संसार की समस्त वस्तुओं पर विचार करता है तथा बाह्य जगत की जो व्याख्या करता है वह भी मनुष्य ही तो है।

आधुनिक काल में विज्ञान भी उस स्थिति में पहुँच गया है कि मनुष्य की जीवनयापन के लिए, अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए बहुत अधिक मरना–खपना न पड़े। उसने इतने यन्त्र, उपकरण जुटा दिये हैं कि मनुष्य को कम से कम श्रम करना पड़े, वहीं उसने मनुष्य की दुनिया को इतना विस्तृत बना दिया है, उसका अपना आप को स्वयं तक या परिवार तक ही सीमित न रहकर मुहल्ले, गाँव, नगर प्रदेश और राष्ट्र की सीमाओं को लाँघ कर पूरे विश्व तक फैल गया है। आज यदि हजारों मील दूर किसी स्थान पर कोई दुर्घटना घटती है तो सारे विश्व को उसका तुरन्त पता लगा जाता है। कहीं कोई प्राकृतिक

© 2018 IJSRSET | Volume 4, Issue 1, January-February-2018
Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099 | Page No : 1722-1731

विपदा आती है तो पूरे विश्व का मनुष्य समाज विपत्तिग्रस्त क्षेत्र के लिए चिंतित हो उठता है। चिंतित नहीं भी हो तो कम से कम सहानुभूति उमड़ती हुई अवश्य अनुभव करता है। यह मनुष्य का आपा विस्तृत होना कहा जाय अथवा दुनिया का छोटा हो जाना, बात एक ही है। अब मनुष्य संसार में घटने वाली किसी भी घटना क्रम या परिवर्तन से अप्रभावित नहीं रह सकता।

अध्यात्मक की प्रेरणा भी पूरी वसुधा को एक परिवार मान कर चलते की है। ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' सर्व खल्विदं ब्रह्म'' ''आत्मैवेदं सर्व'' आदि उक्तियों में अपनी चेतना और भावना को विश्वव्यापी मानकर चलने तथा उसी तरह रहने का सन्देश निहित है। बर्हिजगत में विज्ञान ने दुनिया को एक सूत्र में आबद्ध करने का आधार प्रस्तुत किया है जो अंतर्जगत में वही प्रयोजन अध्यात्म पूरा करता है।

इस प्रकार अध्यात्म और विज्ञान का लक्ष्य एक रहा, दिशा एक रही, जन्म एक साथ हुआ। विकास, परिवर्तन और निष्कर्षों की गति एक रही। इतिहास भी लगभग दोनों का एक समान ही है तो किस आधार पर कहा जा सकता है कि विज्ञान और अध्यात्म एक–दूसरे के विरोध हैं। वस्तुतः तो दोनों एक–दूसरे के पूरक, सत्य की खोज में एक ही अस्तित्व को बढ़े हुए दोनों हाथ हैं। दोनों में तात्विक दृष्टि से कोई विरोधाभास नहीं है, बल्कि अलग–अलग भाषा में दोनों एक ही बात कहते रहे हैं। अगले दिनों यह एकता मनुष्य के भविष्य को और अधिक उज्जवल बनायेगी, इससे कोई सन्देह नहीं है।

सन्दर्भ सूची

1. भगवद्गीता गोयन्दका जयदयाल/अध्याय चतुर्थ श्लोक आठवां, गोबिन्द भवन–कार्यालय कोलकाता, गोरखपुर, गीता प्रेस।
2. वही, अध्याय–आठ श्लोक सं0– दो, तीन, आठ।
3. निगम सोभा, पाश्चात्य दर्शन के सम्प्रदाय, भारती भवन, पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्युटर्स पटना–4, नवयुग प्रेस एवं कालिका प्रेस।

© 2018 IJSRSET | Volume 4, Issue 1, January-February-2018
Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099 | Page No : 1722-1731

4. अखण्ड ज्योति पत्रिका–1947 / जनवरी।
5. आरोहण–तिवारी अरूण, ए0पी0जे0 अब्दुल कलाम हार्परकॉलिंस पब्लिशर्स इण्डिया।
6. मिश्र, सभाजीत : कांट का दर्शन; उ0प्र0 हिन्दी संस्थान; लखनऊ।
7. ए गाइड टू फिलॉसफी; जोड ; सी0ई0एम0 ; केसिंगर पब्लिशिंग, एल0एल0सी0 (जुलाई– 25, 2007)
8. बर्नेट, लिंकन ; द यूनिवर्स एण्ड द आइन्सटाइन; डोवर पब्लिकेशन्स Inc, 31 ईस्ट 2nd स्ट्रीट, मिनीयोला, N.Y. 11501